वैद्यनाथ प्रसाद श्रीवास्तव

बनाम

बिहार राज्य

(30 अप्रैल, 1968)

(न्यायमूर्ति वी० रामस्वामी, जी० के० मित्तर और सी० ए० वैद्यलिंगम)

साक्ष्य—अपने अभिवचन (plea) के समर्थन में साक्ष्य पेश करने में अभियुक्त की असफलता को दोषसिद्धि का आधार नहीं बनाया जा सकता—अभियोजन पक्ष को ही अपना केस साबित करना होता है।

दण्ड प्रक्रिया संहिता, धारा 342क—अभियुक्त की अपनी परीक्षा करवाने में असफलता—न्यायालय को इस पर टीका-टिप्पणी (comment) नहीं करनी चाहिए।

अपीलार्थी एक मुख्तियार था जो बिहार में विधि व्यवसाय (practice) करता था। उसने कुछ अन्य व्यक्तियों के साथ, कृषक उधार अधिनियम, 1884 (Agriculturists Loans Act, 1884) के अधीन उधार प्राप्त करने के लिए आवेदनों पर कतिपय व्यक्तियों की पहचान (identity) को अनुप्रमाणित किया था। यह पता लगा कि आवेदन मिथ्या नामों से दिए गए थे। इस पर अपीलार्थी का कुछ अन्य अभियुक्तों के साथ, विचारण भारतीय दण्ड संहिता की धारा 109 के साथ पठित उसकी धारा 467 के अधीन अपराध के लिए किया गया था। अपीलार्थी का कहना है उसने पृष्ठांकन (endorsements) एक सह-अभियुक्त के आश्वासन पर तथा इस दृष्टि से किये थे कि एक अन्य मुख्तियार देवेन्द्र प्रसाद ने भी उधार के लिए आवेदनों पर अनुप्रमाणन किया था। अभियुक्त के रूप में देवेन्द्र प्रसाद की दलील यह थी कि उसने अनुप्रमाणन रुद्रदेव सिंह नामक व्यक्ति के आश्वासन पर किया था। सेशन न्यायाधीश ने सभी अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया। बिहार राज्य ने उच्च न्यायालय में अपील की। किन्तु जब यह अपील लम्बित थी, देवेन्द्र प्रसाद की मृत्यु हो गई। उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषमुक्ति (acquittal) को अपास्त कर दिया और उसको दो कारणों से सिद्धदोष ठहराया: (1) यद्यपि अपीलार्थी ने अपनी प्रतिरक्षा में यह बात कही है कि उसने उधार के लिए आवेदनों का अनुप्रमाणन शिवजी प्रसाद करपरदाज के आश्वासन पर किया है तथापि इस प्रतिरक्षा के समर्थन में अपीलार्थी ने कोई भी साक्ष्य नहीं दिया; (2) देवेन्द्र प्रसाद ने जिसके मामले से अपीलार्थी का मामला निकटतः संसक्त था, अपनी दलील के समर्थन में, दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 342 क के

अधीन साक्षी के रूप में अपनी परीक्षा नहीं कराई, और यही बात अपीलार्थी पर भी लागू होती है। विशेष इजाजत लेकर इस न्यायालय में अपील की गई।

अभिनिर्धारित—उच्च न्यायालय के आदेश को कायम नहीं रखा जा सका।

(1) अपीलार्थी द्वारा दी गई दलील के समर्थन में सबूत का भार उच्च न्यायालय ने वास्तव में अपीलार्थी पर डाल दिया, बजाय इस बात का निष्कर्ष निकालने के कि क्या अभियोजन पक्ष ने अपना केस साबित कर दिया और क्या दोषमुक्ति का आदेश त्रुटिपूर्ण था।

(2) अभियुक्तों द्वारा दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 342 क के अधीन शपथ पर अपनी परीक्षा न कराने की बात पर टीका-टिप्पणी करके उच्च न्यायालय ने उस धारा के परन्तुक का भंग किया है जिसमें इस बात का विनिर्दिष्टतया उपबन्ध किया गया है कि किसी अभियुक्त द्वारा साक्ष्य न देना पक्षकारों में से किसी पक्षकार के द्वारा या न्यायालय द्वारा किसी टीका टिप्पणी का विषय नहीं बनाया जाएगा और न उससे उसके या उसी विचारण में उसके साथ आरोपित किसी व्यक्ति के विरुद्ध कोई उपधारणा ही उद्भूत होगी।

दाण्डिक अपीली अधिकारिता : 1966 की सं० 47 वाली दाण्डिक अपील।

1962 की सं० 23 वाली सरकारी अपील में पटना उच्च न्यायालय के तारीख 6 सितम्बर, 1965 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर की गई अपील।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री बी० पी० सिंह और डी० एन० मिश्र
प्रत्यर्थी की ओर से	सर्वश्री डी० पी० सिंह और के० एम० के० नायर

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सी० ए० वैद्यलिंगम ने दिया।

न्यायमूर्ति वैद्यलिंगम—

विशेष इजाजत लेकर फाइल की गई इस अपील में छठे अभियुक्त की ओर से, जो इसमें अपीलार्थी है, विद्वान् काउंसेल श्री बी० पी० सिंह ने पटना उच्च न्यायालय के तारीख 6 सितम्बर, 1965 वाले उस आदेश को चुनौती दी है जिसके द्वारा द्वितीय अपर सेशन न्यायाधीश, मुजफ्फरपुर द्वारा पारित किए गए दोषमुक्ति (acquittal) के आदेश को अपास्त (set aside) किया गया था और अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 109 के साथ पठित धारा 467 के अधीन अपराध के लिए सिद्धदोषी ठहराया गया था और तीन मास के कठोर कारावास (rigorous imprisonment) का दंडादेश पारित किया गया था।

उन व्यक्तियों के अनुतोष और पुनर्वास के लिए जिन्होंने 1954

1968(4) eILR(PAT) SC 1

में सीतामढ़ी उपखंड (Sitamarhi Sub-division) में भारी बाढ़ के कारण नुकसान उठाया था, बिहार सरकार कृषक उधार अधिनियम, 1884 (Agriculturists Loans Act, 1884) के अधीन जरूरतमंद और उपयुक्त व्यक्तियों को उधार अनुदत्त कर रही थी। अपीलार्थी एक मुख्तियार था, जो सीतामढ़ी में विधि व्यवसाय करता था। उस अधिनियम के अधीन उधार (loans) अभिप्राप्त करने के संबंध में कतिपय प्ररूपिताओं (formalities) को पूरा करना होता था। उनमें से एक अपेक्षा यह थी कि आवेदक को एक करार-प्ररूप पर अपने हस्ताक्षर करने होते थे और यह भी कि उसकी पहचान किसी वकील (lawyer) द्वारा कराई जानी चाहिए जिसे यह भी चाहिए था कि वह उसके हस्ताक्षर भी अनुप्रमाणित करे। सीतामढ़ी में विधि व्यवसाय करने वाले मुख्तियारों सहित जिनमें से एक अपीलार्थी भी था, जो अनेक आफिसर इस उधार विभाग (Loan D·ptt) से संसक्त थे के बारे में अभिकथन यह था कि उन्होंने 19 नवम्बर, 1955 और 22 दिसम्बर, 1955 के बीच एक षड़यंत्र इसलिए रचा है कि कल्पित व्यक्तियों (fictitious persons) के नाम में उधार (loans) अनुदत्त करने के लिए सरकार को उत्प्रेरित करके सरकार को छला (cheat) जाए। उस षड्यंत्र के अनुसरण में, दुर्गा सिंह और हरिशंकर सिंह नामक दो कल्पित व्यक्तियों (fictitious persons) के नाम में उधार (loans) दिये जाने के लिए दो आवेदन सीतामढ़ी के उपखंड आफिसर (Sub-Divisonal Officer) के समक्ष फाइल किए गए। अभियोजन पक्ष का कहना यह था कि अपीलार्थी और एक दूसरे मुख्तियार, देवेन्द्र प्रसाद ने दुर्गा सिंह और हरीशंकर सिंह के उधार के लिए आवेदनों (loan applications) में यह प्रमाणित किया था कि हम उन पक्षकारों को जानते हैं और उन पक्षकारों ने हमारी उपस्थिति में हस्ताक्षर किए हैं। उक्त दो व्यक्तियों ने खजाने से रकमें प्रायिक अनुक्रम (usual course) में निकाल लीं। अन्ततोगत्वा यह पता चला कि दोनों ही व्यक्ति कल्पित व्यक्ति (fictitious persons) थे जिनको अनेक अभियुक्तों ने खड़ा किया (got up) था। अपीलार्थी ने यह स्वीकार किया है कि मैंने संपृक्त दोनों व्यक्तियों के उधारों के लिए आवेदनों (loan applications) को अनुप्रमाणित किया था, किन्तु उसने यह भी कहा कि मैंने शिवजी प्रसाद करपारदाज के आश्वासन (assurance) पर ही ऐसा किया था। यहां यह भी बता दिया जाए कि इस शिवजी प्रसाद करपारदाज को दोषारोपित (charge-sheeted) भी किया गया था किन्तु सुपुर्दगीकार न्यायालय (Committal Court) द्वारा ही उसको उन्मोचित (discharge) कर दिया गया।

विद्वान् सेशन न्यायाधीश, साक्ष्य पर विचार करने पर, इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि दुर्गा सिंह और हरि शंकर सिंह कल्पित व्यक्ति (fictitious persons) हैं और सीतामढ़ी के उपखंड आफिसर (Sub-Divisional Officer) और उप-खजाने (Sub-Treasury) के साथ कपट (fraud) किया गया है, जिसके परिणामस्वरूप सरकार को 1000 रुपए की हानि उठानी पड़ी। विद्वान् सेशन न्यायाधीश ने अपीलार्थी की इस दलील को स्वीकार कर लिया कि उसने शिवजी प्रसाद करपारदाज के आश्वासन (assurance) पर ही पृष्ठांकन

1968(4) eILR(PAT) SC 1

(endorsement) किया था और इस बात को ध्यान में रखते हुए भी कि एक अन्य मुख्तियार देवेन्द्र प्रसाद पर भी उसी अपराध का आरोप लगाया गया था। देवेन्द्र प्रसाद ने यह स्वीकार किया कि उसने उधार (loans) के लिए आवेदकों के हस्ताक्षरों को अनुप्रमाणित किया था और साथ ही यह दलील भी प्रस्तुत की (set up a plea) कि रुद्रदेव सिंह द्वारा आश्वासन दिए जाने पर ही उसने ऐसा किया था। विचारण न्यायालय (trial court) ने यह स्पष्टीकरण स्वीकार कर लिया और देवेन्द्र प्रसाद को दोषमुक्त (acquit) कर दिया। किन्तु जब दोषमुक्ति के विरुद्ध राज्य द्वारा की गई अपील उच्च न्यायालय में लम्बित थी, देवेन्द्र प्रसाद की मृत्यु हो गई। मगर हमें तो इस देवेन्द्र प्रसाद के बारे में उच्च न्यायालय द्वारा की गई कतिपय ऐसी समुक्तियों (observations) के प्रति निर्देश करना है, जो कि न्यूनाधिक रूप से अपीलार्थी की दोषमुक्ति के आदेश को अपास्त करने के लिए भी आधार बनी। राज्य सरकार द्वारा अपील की जाने पर उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की दोषमुक्ति का आदेश अपास्त कर दिया है। दोषमुक्ति के आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए उच्च न्यायालय ने जैसा कि हमने समझा है, ये दो कारण दिये हैं, अर्थात् (1) यद्यपि अपीलार्थी ने अपनी प्रतिरक्षा में यह बात कही है कि उसने उधार के लिए आवेदनों (loan applications) का अनुप्रमाणन शिवजी प्रसाद करपारदाज के व्यपदेशन (representation) और आश्वासन (assurance) पर किया, तथापि इस प्रतिरक्षा के समर्थन में अपीलार्थी ने कोई भी साक्ष्य नहीं दिया है, तथा (2) देवेन्द्र प्रसाद ने जिसके मामले से अपीलार्थी का मामला निकटतः संसक्त (closely connected) था, यह दलील दी थी कि उसने उधार के लिए आवेदनों का अनुप्रमाणन रुद्रदेव सिंह के आश्वासन और व्यपदेशन पर किया था और यह दलील कि देवेन्द्र प्रसाद ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 342 क के अधीन, साक्षी के रूप में अपनी परीक्षा नहीं कराई और न उसने अपने दावे के समर्थन में कोई अन्य साक्ष्य ही दिया। वास्तव में, ये ही वे आधार हैं जिन पर कि अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 109 के साथ पठित धारा 467 के अधीन अपराध के लिए सिद्धदोषी ठहराया गया है और उसे 3 मास की कालावधि के लिए कठिन कारावास (rigorous imprisonment) भुगतने का दंडादेश दिया गया है।

हमारा समाधान हो गया है कि उच्च न्यायालय के आदेश को कायम (sustain) नहीं रखा जा सकता। ऊपर उल्लिखित प्रथम बात के बारे में तो उच्च न्यायालय ने सबूत का भार अपीलार्थी पर डाल दिया, बजाय इस बात का निष्कर्ष निकालने के कि क्या अभियोजन पक्ष ने अपना केस साबित कर दिया है और क्या दोषमुक्ति का आदेश त्रुटिपूर्ण (erroneous) है। जहाँ तक दूसरी बात का संबंध है, देवेन्द्र प्रसाद की परीक्षा न की जाने की बात पर यह टीका टिप्पणी कर के कि उसने प्रतिरक्षा साक्षी (defence witness) के रूप में अपनी परीक्षा नहीं कराई, उच्च न्यायालय ने वस्तुतः धारा 342 क के परन्तुक का भंग किया है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 342 क के परन्तुक के खंड (ख) के अधीन इस बात का विनिर्दिष्टतया उपबंध किया गया है कि किसी अभियुक्त द्वारा साक्ष्य न देना

पक्षकारों में से किसी पक्षकार के द्वारा या न्यायालय द्वारा किसी टीका-टिप्पणी का विषय नहीं बनाया जाएगा और न उससे उसके या उसी विचारण में उसके साथ आरोपित किन्हीं व्यक्तियों के विरुद्ध कोई उपधारणा (presumption) ही उद्भूत होगी। उच्च न्यायालय ने यह कथन किया है कि अपीलार्थी का मामला देवेन्द्र प्रसाद के मामले से निकटतः संसक्त (closely connected) है। वास्तव में, अपीलार्थी का अभिवचन यह था कि उसने उधार के लिए आवेदकों के हस्ताक्षरों को इसलिए अनुप्रमाणित किया कि एक दूसरे मुख्तियार देवेन्द्र प्रसाद ने उन्हें अनुप्रमाणित कर दिया था और इस लिए भी किया कि शिवजी प्रसाद करपारदाज द्वारा उसकी बाबत आश्वासन दिया गया था। देवेन्द्र प्रसाद की दलील यह थी कि उसने आवेदकों के हस्ताक्षरों का अनुप्रमाणन रुद्रदेव सिंह नामक व्यक्ति के, जो उसका सहपाठी (classmate) था, आश्वासन पर किया था। इस दलील पर विचार करके ही उच्च न्यायालय ने देवेन्द्र प्रसाद के धारा 342 क के अधीन साक्ष्य न देने की बात पर टीका-टिप्पणी (comments) की है और उच्च न्यायालय ने भी यह दृष्टिकोण अपनाया है कि अपीलार्थी की प्रतिरक्षा को भी वे ही तर्क लागू होंगे। इसका अर्थ यह है कि साक्ष्य देने में अपीलार्थी की असफलता पर उच्च न्यायालय ने टीका-टिप्पणी की (commented) है और उसके विरुद्ध उसने एक उपधारणा (presumption) भी कर ली है जो दोनों बातें ही दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 342 क के परन्तुक के खंड (ख) के अधीन अवैध (illegal) हैं।

उच्च न्यायालय के निर्णय में इस गम्भीर त्रुटि (serious infirmity) के कारण उस आदेश को जिस पर आक्षेप किया गया है (order under attack) अपास्त (set aside) किया जाता है और द्वितीय अपर-सेशन न्यायाधीश, मुजफ्फरपुर, के आदेश को जिसके द्वारा अपीलार्थी दोषमुक्त (acquit) किया गया था, प्रत्यावर्तित (restore) किया जाता है। परिणामस्वरूप, अपील मंजूर की जाती है।

अपील मंजूर कर ली गई।